अध्याय : 3

विष्णु प्रभाकर के मनोवैज्ञानिक नाटकों में

मनोविकृतियाँ और रक्षायुक्तियाँ

अध्याय : 3

विष्णु प्रभाकर के मनोवैज्ञानिक नाटकों में विभिन्न मनोविकृतियाँ और रक्षायुक्तियाँ

भूमिका

मानव एक सामाजिक प्राणी होने के कारण वह मुख्यतया इस जगत् में सामान्य व्यवहार करता रहता है। लेकिन कभी-कभी यह भी दिखायी देता है कि वह कुछ कारणवश असामान्य (Abnormal) व्यवहार करने लगता है। इस प्रकार का व्यवहार करते समय उसके मन में असंतुलन पैदा होता है और इस असंतुलन के कारण उसके मन में विभिन्न मनोविकृतियाँ पैदा होती हैं। जिस प्रकार मानव मन में निहित विभिन्न मनोविकार होते हैं उसी प्रकार उसमें विविध प्रकार कि विकृतियाँ भी दिखायी पडती है। जहाँ प्रथम अध्याय में हमने विष्णु प्रभाकर के मनोवैज्ञानिक नाटकों में चित्रित मनोविकारों का विवेचन-विश्लेषण करने का प्रयास किया है वहाँ इस अध्याय में उनके मनोवैज्ञानिक नाटकों में चित्रित मनोविकृतियों और रक्षायुक्तियों का विवेचन विश्लेषण करना हमें अभिप्रेत है।

मनोविकृतियाँ

मानव के असामान्य व्यवहार के अनुसार उसकी मनोविकृतियों के कुछ प्रमुख प्रकार ये हैं - चिन्ता मनःस्नायुविकृति, मनोविदलता . उत्साह-विषाद, व्यामोह या संभ्रान्ति, प्रदर्शन प्रवृत्ति, आदि।

रक्षायुक्तियाँ

विकृतियों से बचाव पाने के लिए जो रक्षायुक्तियाँ अपनायी गयी हैं वे इसप्रकार हैं - दमन, शमन , उदात्तीकरण, प्रक्षेपण स्थानान्तरण, क्षतिपूर्ति आदि।

सामान्य-असामान्य व्यक्ति : अर्थबोध

मनोविज्ञान व्यवहार का विज्ञान है। व्यवहार के मुख्यतः दो रूपे होते हैं - 1·सामान्य, 2· असामान्य। असामान्य मनोविज्ञान उन व्यक्तियों का अध्ययन करता है जिनके व्यवहार में सामान्य व्यक्ति की अपेक्षा कुछ विशेषताएँ होती हैं। सामान्य और असामान्य व्यक्ति में अंतर होता है।

सामान्य व्यक्ति वह होता है जो साधारण रूप से अपनी क्रियाओं को करता है, अपने दैनिक क्रिया-कलापों पर विचारपूर्वक निर्णय लेता है तथा सामाजिक नियम एवं मान्यताओं का एक सीमा तक पालन भी करता है। हॉर्नी के अनुसार - जिस व्यक्ति में स्वीकारात्मक एवं रचनात्मक सम्भावना विद्यमान होती है, उसका व्यक्तित्व सामान्य होता है तथा उसे ही सामान्य व्यक्ति कहते हैं। सामान्य व्यक्ति के लिए (Normal) शब्द का प्रयोग किया जाता है।[1]

सामान्य व्यक्ति की विशेषताएँ

1· <u>सामाजिकता</u> : सामान्य व्यक्तियों में एक विशेषता होती है कि उनमें सामाजिक व्यवहार के दृष्टिकोण से कानून की मर्यादा की रक्षा तथा सामाजिक परम्पराओं व मर्यादाओं के सम्मान का गुण विद्यमान होता है। जाति, धर्म, संस्कृति आदि के नियमों का उल्लंघन नहीं करते।

2· <u>व्यक्तित्व-विशेषताओं में समानता</u> : यदि हम बहुसंख्यक व्यक्तियों के जीवन इतिहास का अध्ययन करें तो हमें उनके जीवन में एक प्रकार की समानता मिलेगी। जैसे - उत्तेजनशीलता, विषादयुक्तता विशेष रूप में नहीं होती। जीवन की विफलताओं एवं कष्टों से इनका जीवन असन्तुलित नहीं होता, इनमें कठिन परिस्थितियों का धैर्यपूर्वक सामना करने की क्षमता होती है।

3· <u>विभिन्न आवश्यकताओं तथा क्रियाओं में समानता</u> : सामान्य व्यक्ति छोटी-छोटी विफलताओं से में घबराता नहीं, उनसे सामना करता है। उसे अपने परिवार के सुख एवं समृध्दि का ध्यान रहता है।

4· **परिस्थिति के अनुरूप समायोजन** : अगर दुःखद परिस्थिति है तो वह रोता है, दुःखद या सुखद भाव को प्रकट करने में वह इस बात का भी ध्यान रखता है कि अन्य लोगों की राय में यह ठीक है या नहीं।

5· **सही तथा गलत नियमों का ज्ञान होना** : सामान्य व्यक्ति अपनी क्रियाओं में सामाजिक, सांस्कृतिक या राजनैतिक विधानों या नियमों, परम्पराओं, नैतिक आदर्शों आदि का सही पालन करता है।

6· **अवैधानिक कार्यों के प्रति पश्चाताप** : सामान्य व्यक्ति भी गलती करता है पर जब उसे गलत काम का एहसास होता है तो, वह पश्चाताप भी व्यक्त करता है।

एक सामान्य व्यक्ति पूर्ण रूप से सुरक्षित या भय से मुक्त होता है। सामान्य व्यक्ति के जीवन के उद्देश्य निश्चित व सामाजिक परिस्थितियों के अनुकूल होते हैं। सामान्य व्यक्ति हवाई क़िले नहीं बनाता। वह समय, स्थान, व्यक्ति व परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए व्यवहार करता है। सामान्य व्यक्ति अपनी कमियों को जानता है। सामान्य व्यक्ति इतना योग्य होता है कि वह अपने पूर्व-अनुभवों का लाभ वर्तमान व भविष्य में उठाता है।

असामान्य को अंग्रेजी में "ऐबानॉरमल" (Abnormal) कहते हैं। दैनिक जीवन में कुछ ऐसे भी व्यक्ति होते हैं। जिनका व्यवहार अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा भिन्न होता है। ये व्यक्ति अपने विचारों को न तो स्वयं समझते हैं और न ही अन्य लोगों को समझा पाते हैं। ऐसे व्यक्तियों में सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा सीमित बुध्दि, अस्थिर संवेग, असंगठित व्यक्तित्व, दूषित चरित्र आदि बातें विद्यमान होती हैं। असामान्य मनोविज्ञान मुख्यतः असामान्य व्यवहार का अध्ययन करता है। "असामान्य मनोविज्ञान, मनोविज्ञान का वह क्षेत्र है जिसमें असामान्य व्यवहार को समझने के लिए मनोवैज्ञानिक सिध्दांतों का उपयोग तथा विकास का व्यवहार किया जाता है।"[2]

असामान्य व्यक्ति की विशेषताएँ

1· अधिकतर असामान्य व्यक्तियों में बौध्दिक दुर्बलता या मानसिक रोगग्रस्तता निहित रहती है।

2· ये व्यक्ति असंतुलित होते हैं।

3· इनकी क्रियाओं में असामाजिकता रहती है, क्योंकि उन्हें प्रायः अच्छे व बूरे का ज्ञान या ध्यान नहीं रहता।

4· उनमें संवेगात्मक अस्थिरता रहती है।

5· इतना दूषित चरित्र व जीवन प्रमुखतः समाज विरोधी होती है।

6· ये व्यक्ति समाज पर बोझ बनकर रहते हैं तथा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप में समाज को हानि पहुँचाते हैं। दूसरे शब्दों में, असामान्य व्यक्ति में सामाजिक कल्याण की भावना नहीं होती।

मनःस्नायुविकृतियाँ (Psychoneuroses)

मनुष्य जीवधारी प्राणी है। मनुष्य के शरीर में स्नायुओं का जाल फैला हुआ है। मनुष्य की शारीरिक संरचना में स्नायु संस्थान का बड़ा ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्नायुसंस्थान को नाड़ी मंडल या तंत्री का समूह भी कहा जाता है। वास्तव में स्नायुसंस्थान मानव की मानसिक क्रियाओं की आधारशिला है। मानव में फैले हुए स्नायुओं का जाल दो प्रकार के कार्य करता है जिनके आधार पर स्नायुसंस्थान को दो नामों से पुकारा जाता है। 1·अभियोजक (Adjustor) और 2· वाहक (Conductor)। मानव के स्नायुसंस्थान का जाल निम्नलिखित आकृति में सहज ही दिखायी देगा -3

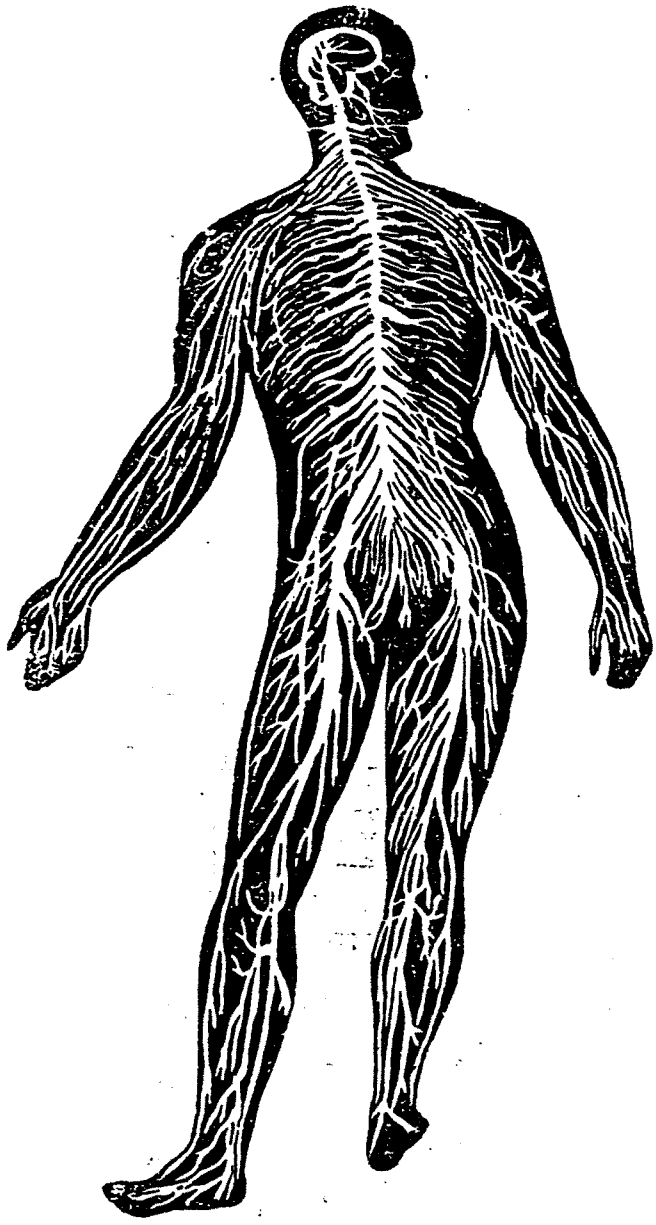

मानव की शारीरिक संरचना में उसका मस्तिष्क विशेष महत्त्वपूर्ण है। वास्तव में केंद्रिय स्नायुमंडल का यह एक महत्त्वपूर्ण घटक है। मस्तिष्क खोपड़ी के घेरे के अंदर सुरक्षित रहता है। इस अंग की कोमलता के कारण प्रकृति ने इसे सुरक्षित रखने की व्यवस्था की है। इसको चारों ओर से अच्छी तरह बचाने के लिए खोपडी के अंदर चारों ओर एक तरल पदार्थ भरा हुआ है। मानव का मस्तिष्क 10 खरब (10 billion) स्नायुकोषों से बना होता है। इसका भार तीन पाऊण्ड होता है। यह सूचना शरीर के प्रत्येक भाग से लेता है और भेजता है। मानव मस्तिष्क के निम्नांकित आकृति को देखने से उसकी विशिष्टता सहज ही दिखायी देती है - [4]

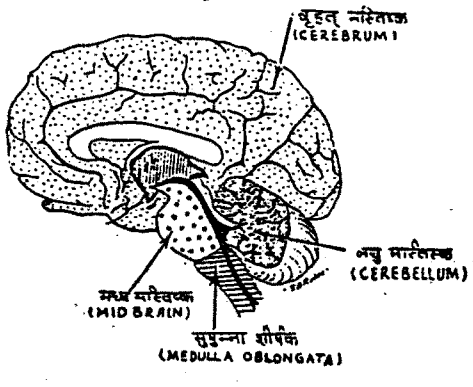

—मस्तिष्क के मुख्य भाग

किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व में जब सामान्यता से हटकर कुछ विचलन। हो जाता है तो व्यक्ति में स्नायुविकृति (Neurosis) मान ली जाती है। स्नायुविकृति के कारण व्यक्तित्व में आया विचलन स्थायी नहीं होता क्योंकि व्यक्ति इस विकृति के होते हुए भी अपनी दिनचर्या सफलतापूर्वक निभाता है। यह विचलन धरातलीय या सतही होता है। स्नायुविकृति से पीड़ित व्यक्ति में व्यावहारिक विचलन अधिक उग्र रूप से पाया जाता है। संक्षेप में मनःस्नायुविकृति में प्रायः व्यक्ति आंशिक रूप से कार्य करने में असामान्य हो जाता है। इस विकृति से पीड़ित व्यक्ति प्रायः अत्यधिक संवेदनशील, अहंकेन्द्रित, भय, चिन्ता, दुश्चिंता, तनाव से ग्रस्त, निराशा विषाद से युक्त तथा पलायनवादी हो सकता है। अपनी विकृति से बचने के लिए प्रायः रक्षायुक्तियों का उपयोग करने में भी प्रयत्नशील रहता है। सामान्यतः "इस प्रकार से विकृति से पीड़ित व्यक्तियों को अस्पताल में नहीं रखा जाता है वे अपने नित्य के व्यवहार समाज में करते रहते दिखायी देते हैं। कुछ अपवादभूत व्यक्तियों को ही अस्पताल में दाखिल किया जाता है।"[5]

चिन्ता मनःस्नायुविकृति (Anxietr Neuroses)

चिन्ता मनःस्नायुविकृति में चिन्ता भय से उत्पन्न होती है। कॅमरॉन के अनुसार, "इस विकृति से पीड़ित व्यक्तियों मेंव्यापक संवेगात्मक तनाव व स्वतन्त्र चिन्ता के प्रमुख लक्षण मिलते हैं। व्यक्ति के सम्मुख चिन्ता एवं संघर्ष व तनाव हरते ही हैं।"[6] इसमें शरीर का वजर घटना, दिल की धडकन बढ़ जाना, घुटन महसूस करना, पसीना आना, भूख न लगना, थकान, घबराहट आदि लक्षण पाये जाते हैं। विफल महत्त्वांकाक्षा, अरूचिकर व्यवसाय, आर्थिक हानि, पारिवारिक अशान्ति, अपराध भावना, दुःख, लैंगिक कुसमायोजन, मानसिक संघर्ष आदि चिन्ताएँ मनःस्नायु-विकृति के कारण उत्पन्न होती है।

"डॉक्टर" नाटक में नाटककार विष्णु प्रभाकर ने यह दर्शाया है कि नयी मरीजा अर्थात सतीशचन्द्र शर्मा की पत्नी को अस्पताल में दाखिल किये जाने पर वहाँ के कर्मचारियों में एक ऐसी चिन्ता बनी रहती है कि इस अस्पताल पर कुछ बड़ा

संकट आनेवाला है। इस नर्सिंग होम में दाखिल की गयी एक सनकी मरीजा का नाम नीरू है। यद्यपि वह सनकी मरीजा है फिर भी नयी मरीजा के अस्पताल में दाखिल होने से उसके मन में यह चिन्ता उद्‌भूत होती है कि इस नर्सिंग होम में भूचाल आनेवाला है।[7] तत्‌पश्चात इस नाटक में नाटककार ने यह दर्शाया है कि नयी मरीजा के आने के कारण अस्पताल में यहाँ तक चर्चा या कानाफूसी होती रहती है कि बाहर से शान्त दिखायी देने वाला यह नर्सिंग होम अन्दर से एक बर्फीले तूफान जैसा दिखायी देता है। इतना ही नहीं डॉ॰अनीला के बारे में भी चिन्ता व्यक्त की जाती है कि जो अनीला प्रशान्त महासागर के समान दिखायी देती थी वह नयी मरीजा के अस्पताल में आने के कारण मानो ज्वालामुखी की तरह भभक उठती है - नीरू के शब्दों में - "मैं तो पागल हूं पर काकी ने बाल धूप में सफेद नहीं किए दादा। यह नर्सिंग होम से अन्दर ही अन्दर बर्फीला तूफान सा कैसा उठ रहा है ? यहां दीदी, जो प्रशान्त महासागर की तरह शान्त रहती थी, रह-रहकर उसकी छाती ज्वालामुखी की तरह क्यों भभक उठती है ?[8]

प्रस्तुत नाटक में नीरू व्यंग्यपूर्ण हँसी में भी बताती है कि अपना दुःख भूलाने के लिए दूसरों की चिन्ता करना इन्सान का स्वभाव है, फायदेमन्द जो है। लेकिन साथ ही साथ नीरू यह भी कहती है कि नई मरीजा के आने के कारण डॉ॰अनीला बहुत बेचैन नजर आती है उसके पहले वह कभी इतनी बेचैन नहीं दिखायी पड़ी। डॉ॰अनीला की इस बेचैनी के कारण नीरू चिंताग्रस्त बन जाती है।

नीरू को एक मानसिक रुग्ण के रूप में अस्पताल में दाखिल किया गया है और सब लोग उसे पागल के रूप में देखते हैं लेकिन वह स्वयं इस बात को स्वीकार करती है कि वह आधी पागल है। फिर भी यह आधी पागल नारी नयी मरीजा के अस्पताल में आने के कारण चिन्ताक्रान्त हो जाती है। उसे इस बात का डर है कि अस्पताल पर किसी प्रकार का संकट आ गया है। उसका डर उसकी चिन्ता वास्तव में स्नायुविकृति का ही एक नमूना है।

डॉ·अनीला : चिन्ता का कारण भय होता है। "डॉक्टर" नाटक में डॉ·अनीला में चिन्ता पायी जाती है। अनीला के जीवन में जो समस्या खड़ी हो गयी वह यह कि - "अनीला के पति सतीशचन्द्र ने अनीला का त्याग किया है और नयी मरीजा उनकी दूसरी पत्नी है। जो अनीला की सौत है वह अस्पताल में आने के बाद अनीला चिन्तीत होती है। सईदा कहती है कि मरीजा के पति सतीशचन्द्र शर्मा है, वे झाँसी के रहनेवाले हैं, पूना से आये हैं। तब अनीला सतीशचन्द्र को जान जाती है पर उसके चेहरे का रंग पीला पड़ जाता है वह घबरा जाती है। अपना पति और सौत अस्पताल मे मौजूद है इसी भावना के कारण ही अनीला के पेट में दर्द होने लगता है। वह लीला से एक कप चाय माँगती है।

सतीशचन्द्र शर्मा ने अनीला का त्याग करने के बाद अनीला के मन में जो अपमान का बदला लेने की भावना है वह अब जाग जाती है। मरीजा को मारने का मौका उसके हाथों छूट नहीं सकता। इस कारण भी अनीला भयभीत होती है। अपने हाथों मरीजा की हत्या हो जायेगी यही भय उसके मन को त्रस्त करता है। अनीला, यह डर अपने भाई दादा से बताती भी है - "क्योंकि मुझे डर है कि मैं उसे मार डालूंगी।"[9] नयी मरीजा को मार डालने का भय उसे बार-बार चिन्ताग्रस्त बना देता है। प्रस्तुत नाटक में लगभग 7-8 बार इस बात का उल्लेख दिखायी देता है। डॉ·अनीला नयी मरीजा को मार डालेगी यही भय उसे सताता रहता है। इसी कारण मरीजा का ऑपरेशन होने तक वह चिन्तित रहती है। उस ऑपरेशन के सफल होने के उपरान्त वह इस चिन्ता से मुक्त हो जाती है।

"डॉक्टर" नाटक का एक पात्र दादा है। दादा डॉ·अनीला के भाई हैं। दादा चिन्ता मनःस्नायुविकृति से ग्रसित हैं। उसमें हर वक्त एक ही चिन्ता रहती है कि अगर सतीशचन्द्र शर्मा उनके सामने आए तो वे उसे गोली से उड़ा देंगे। सतीशचन्द्र शर्माने डॉ·अनीला का त्याग करके जो अपमान किया है, दादा उस अपमान का बदला सतीशचन्द्र को मारकर लेना चाहते हैं। इसी कारण दादा हर वक्त अपने पास पिस्तौल लिए घूमते हैं। इसी कारण दादा प्रथमतः सतीशचन्द्र शर्मा अपनी पत्नी मरीजा को अस्पतला में दाखिल करने आते हैं तो दादा उन्हें बाहर ही रोकना

चाहते हैं - इसके पीछे भी भय ही है।

मरीजा और सतीशचन्द्र शर्मा के अचानक अस्पताल में दाखिल होने से दादा अपना असंतुलन खो बैठते हैं। सामने आनेवाली परिस्थिति से बचने के लिए वे अस्पताल से भाग भी जाते हैं। दादा संज्ञाहीन हो जाते हैं, कुर्सी पर गिर पड़ते हैं। चीखते हैं, तथा रामू, लीला आदि लोगों को डाँटते भी हैं। यह सब क्रियाएँ चिन्ता के कारण ही होती है। डॉ॰अनीला के पूछने पर भी वे कहते हैं कि मैंने सतीशचन्द्र को अपने समाने इसीलिए आने नहीं दिया - "क्योंकि मुझे डर था कि मैं उसे पिस्तौल का निशाना बना बैठता"[10]

प्रस्तुत पात्र नीरू, अनीला और दादा में यह विकृति पायी जाती है। जिसमे सामान्य चिन्ता की अपेक्षा अधिक भयावह दुःश्चिता सर्वप्रमुख रहती है।

युध्द मनःस्नायुविकृति (War Psychoneurosis)

यह विकृति मुख्यतया सैनिकों में पायी जाती हैं। युध्द स्नायुविकृति में युध्द क्षेत्र का वातावरण, सैनिकों की कराहट, विव्हलता से सैनिक युध्द के लिए तैय्यार नहीं होते। उनमें घबराहट, तनाव, उत्साह की कमी, अपराध भावना निर्णय ले पाने की स्थिति और व्यवहार में अस्थिरता के लक्षण पाये जाते हैं। सैनिकों के अतिरिक्त अन्य मानवों में भी यह विकृति पायी जाती है। यहाँ पीड़ित व्यक्ति संघर्षमय स्थिति से बचना चाहता है और इसी कारण सुरक्षात्मक उपाय ढूँढ निकालता है।

"डॉक्टर" इस नाटक में अनीला का ऑपरेशन के समय, मरीजा का ऑपरेशन करना तय करके भी हॉस्पिटल से भाग जाना। ऑपरेशन करना है या नहीं करना, मरीजा का बदला लेना या उसे मार डालना इस द्विधा स्थिति से बचने के लिए डॉ॰अनीला अस्पताल से भाग जाने की कोशिश करती है। बेटी शशि बीमार है इसका बहाना कराके वह रामू से टैक्सि लाने के लिए कहती है और बिना किसीको बताए

हुए भाग जाना चाहती है। रामू टैक्सी लाता है और अनीला एअर पोर्ट तक जाती भी है। डॉ॰अनीला की यह मनोदशा युध्द मनःस्नायुविकृति ही है। यहाँ यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि आखिर मरीजा के ऑपरेशन का खयाल प्रबल होने पर वह अस्पताल वापस लौटती है।

मनःश्रान्ति (Neurasthenia)

मनःश्रान्ति वह मानसिक असामान्यता है जो निरन्तर होने वाली संवेगात्मक तनावों के फलस्वरूप उत्पन्न होती है। व्यक्ति में दीर्घकालीन मानसिक, शारीरिक थकान होने के कारण व्यक्ति अत्यधिक चिड़चिड़े स्वभाव का होता है। फ्रायड़ के अनुसार "यह थकान मनःश्रान्ति है जिसकी उत्पत्ति शैशावावस्था के लैंगिक विकास में ही हो जाती है।

इस विकृति में थकान, सिरदर्द, विषाद, मन्दाग्नि, अनिद्रा, स्वार्थ आलत्स तथा शूल पीड़ा आदि लक्षण दिखायी देते हैं। अति परिश्रम, वंशानुक्रम, अत्यधिक संभोग, लैंगिक विपर्यास कष्टदायक स्थिति से बचने कि इच्छा आदि कारण होते हैं।

मनःस्नायुविकृति का एक प्रकार मनःश्रान्ति यह मनःस्नायु शैथिल्य है। (Asthenic Reuction or Neurasthenia) वस्तुतः इस प्रकार का मनोस्नायुशैथिल्य या मनःश्रान्ति इसलिए उत्पन्न होती है कि इस प्रकार का व्यक्ति अति परिश्रम करता है। कभी उसका केन्द्रीय स्नायुमंडल दूर्बल हो जाता है। वह अल्प परिश्रम भी करता है। अपनी कष्टदायक परिस्थिति से बचने की इच्छा उसके मन में बनी रहती है। कभी उसके मन में मानसिक विक्षोभ उमड आता है। और साथ ही साथ उसका व्यक्तित्व अंतर्मुखी बना रहता है। और संवेगात्मक तनाव भी बराबर बने रहते हैं। सामान्य थकान और मनःश्रान्ति में कुछ अंतर है1 किसी व्यक्ति के शारीरिक या मानसिक रूप से अत्यधिक परिश्रम करने से सामान्य थकान उत्पन्न होती है किन्तु मनःश्रान्ति में व्यक्ति शारीरिक या मानसिक रूप से अत्यधिक परिश्रम करने पर जरूर पीड़ित होता है लेकिन उसकी इस पीड़ा में संवेगात्मक

तनाव अत्यधिक बढ़ जाता है।

"डॉक्टर"

"डॉक्टर" नाटक की नायिका अनीला में यह विकृति पायी जाती है। यह मनोस्नायु शैशिल्य विकृति का उत्कृष्ट उदाहरण है। नाटककार ने प्रस्तुत नाटक में यह दर्शाया है कि डॉ·अनीला डॉक्टर बनने पर अपने नर्सिंग होम में हमेशा कार्यरत रहती है। अस्पताल में दाखिल हुए मरीजों की वह स्वयं देखभाल करती रहती है। और मरीजों कि चिकित्सा भी बड़ी तन्मयता से करती रहती है। अति परिश्रम के कारण उसमें थकान का प्रादुर्भाव सहज ही होता है। और इसी कारण वह अपनी बूढ़ी सेविका से कहती है उसे चाय की आवश्यकता है। साथ ही साथ अति परिश्रम के कारण डॉ·अनीला के केन्द्रिय स्नायु मंडल भी दूर्बल हो जाता है उसके पेट में दर्द होने लगता है। इसी कारण वह काकी से गरम पानी कि माँग करती है और सेकना चाहती है - (कांपकर) हां, हां, काकी। पेट में तेज दर्द है जरा पानी गरम करो न, सेकूंगी।..."[11]

प्रस्तुत नाटक में यह भी दर्शाया गया है कि दूसरे अंक के दूसरे दृश्य में यह दिखायी देता है कि डॉक्टर अनीला बेहद थकी हुई है, त्रस्त है। जैसे अपना ही भूत हो, जैसे गहरी नींद से जाग उठी हो। वह कुछ क्षण बाद सोफे पर बैठ जाती है और कई क्षण हाथों में सिर पकड़े बैठी रहती है। वह नयी मरीजा के ऑपरेशन करने के बारे में उलझन में पड़ जाती है तब उसमें मनःभ्रान्ति के लक्षण दिखायी देते हैं। नयी मरीजा को ऑपरेशन करके बचाना या उसे मार डालना यह कष्टदायक परिस्थिति डॉ·अनीला के सामने खड़ी होती है और इस परिस्थिति से बचने कि इच्छा उसके मन में उत्पन्न होती है और इसी कारण वह अपनी बेटी शशि की बीमारी का बहाना करके अस्पताल से बाहर जाने की सोचती है और मरीजा का ऑपरेशन डॉ·केशव और सईदा कर सकते हैं यह धारणा भी व्यक्त करती है और मनःभ्रान्ति का आश्रय लेती है। साथ ही साथ इस उलझन में डॉ·अनीला का मानसिक विक्षोभ और संवेगात्मक तनाव भी स्पष्ट होता है।

कार्यपरक मनोविकृति

मनोविकृतियों के महत्त्वपूर्ण प्रकारों में कार्यपरक मनोविकृति का समावेश होता है। "कार्यपरक" शब्द से ही स्पष्ट है कि इस विकृति से पीड़ित व्यक्ति समाज में कुछ न कुछ कार्य भी करता रहता है और उसका व्यक्तित्व किसी-न-किसी मात्रा में विखण्डित भी रहता है। क्रेशमर नामक मनोवैज्ञानिक का कहना है कि केवल मस्तिष्क विचारों व परिवर्तनों के आधार पर ही कार्यपरक विकृतियों की जानकारी संभव है। अनेक विद्वानों ने अपने शोधात्मक अध्ययन के आधार पर यह बताया है कि शारीरिक परिवर्तन व अन्तःस्त्रावी ग्रंथियों के कारण कार्यपरक मनोविकृतियों में मनोविदलता, उत्साह, विषाद, संभ्रान्ति या पैरोनिया व्यामोह आदि मनोविकृतियों का समावेश होता है।

मनोविदलता में मुख्यतः व्यक्तित्व का विच्छेद या अस्तव्यस्त होने का भाव प्रमुख रहता है। तथापि वास्तव में मनोविदलता का अर्थ है यथार्थता में सम्बन्ध विच्छेद इस प्रकार मनोविकृत व्यक्ति वास्तविक दुनिया से अपने सम्बन्ध को पूर्ण रूप से तोड़ देता है, तथा अपनी बनायी हुई दुनिया में ही विचरण करता है।

उत्साह और विषाद वास्तव में दो मनोविकार हैं, लेकिन जब इनकी तीव्रता मानव मन में बढ़ जाती है तब इसी प्रकार का व्यक्ति कार्यपरक विकृतियों के अन्तर्गत आ जाता है। उसके उत्साह की मात्रा उल्लास के रूप में अत्यधिक बढ़ जाती है, उसमें मनोशारीरिक क्रियाएँ असाधारण रूप में दिखायी पड़ती है। यह रोगी अत्यधिक संतुष्ट और चुस्त भी रहता है। तथापि विचारों में अत्यधिक उड़ान की स्थिति प्राप्त करता है। उसमें एकाग्रता का अभाव, विभ्रम तथा विपर्यप प्रधान होते हैं।

विषाद मनोविकार की तीव्रता जब बढ़ जाती है तब इस विकृति से पीड़ित व्यक्ति उदास चिन्ताग्रस्त, निकम्मा ओर खुद को अपराधी मानने लगता है। इस प्रकार का व्यक्ति निष्क्रिय, मानसिक क्रिया विरोध, मन्दन (Mental returadation) विचारशून्यता, ध्यान केंद्रित करने की अनुपयोगिता आदि के लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। रोगी अत्यन्त शीघ्र थक जाता है। विश्राम करना चाहता है वह भविष्य के

प्रति निराशावादी विचार करता है जिसके कारण आत्महत्या ही उसे सही रास्ता सूझता है। इस प्रकार के मनोविकृत व्यक्तियों में विपर्यय, विभ्रम उत्पन्न होते हैं।

व्यामोह या संभ्रान्ति

व्यामोह या संभ्रान्ति एक प्रकार की मनोविकृति है। इस मनोविकृति से पीड़ित व्यक्ति अहं केंद्रित होती है। यद्यपि सामान्य व्यक्ति में भी व्यामोह या संभ्रान्ति दिखायी देती है। इस प्रकार के मनोविकृत व्यक्ति में यह व्यामोह या संभ्रान्ति अतिरंजित रूप में विद्यमान रहती है। इस प्रकार की मनोविकृत में पीड़ित व्यक्ति उपरी तौर से विकृत नहीं दिखायी देता, समाज में अपना काम करता रहता है। व्यामोह या संभ्रान्ति से पीडित व्यक्ति सदैव स्वभाव से गर्व करनेवाला होता है। वह अपनी प्रशंसा में बहुत कुछ करता है। उसका स्वभाव शंकालू होता है। व्यामोह या संभ्रान्ति से पीड़ित व्यक्ति सभी क्षेत्रों में अपने आपको समायोजित (Adjusted) कर लेता है, चाहे वह परिवार हो या व्यवसाय हो, कॉलेज हो या विश्वविद्यालय हो सभी स्थानों पर वह "समायोजन" कर लेता है। ऐसा व्यक्ति अपनी अहं रक्षा हेतु अपना समायोजन बनाये रखता है। ऐसे व्यक्ति को मानसिक अस्पताल की आवश्यकता नहीं होती। इस विकृति से पीड़ित व्यक्ति की आयु 50 वर्ष होती है। प्रायः 25 से 65 वर्ष की आयु में व्यक्ति व्यामोह या भ्रान्ति से ज्यादातर पीड़ित रहता है। संभ्रान्ति या व्यामोह में पीड़ात्मक व्यामोह, विवादात्मक व्यामोह, धार्मिक व्यामोह, सुधारात्मक व्यामोह, कामात्मक व्यामोह, कायिक व्यामोह पाये जाते हैं।[12]

संभ्रान्ति या व्यामोह

कार्यपरक विकृति में यह एक प्रमुख भेद है। महानता के व्यामोह में व्यक्ति अपने आप को महान समझने लगता है। यह झूठा विश्वास है जो व्यक्ति सच मानता है। महानता के व्यामोह से पीड़ित व्यक्ति अपने आपको महान लेखक, महान वैज्ञानिक तथा ईश्वर का अवतार, ईश्वर का दूत समझने लगता है। अपने आपको असाधारण समझता है।

"बन्दिनी" नाटक में कालीनाथ राय एक जमींदार हैं। उसके उपेन्द्र और सुरेन्द्र दो बेटे हैं तथा सावित्री और उमा दो बहुएँ हैं। जमींदार साहब अपने आपको महान समझते हैं। जमींदार साहब अपनी महानता साबित करने के लिए दान, धर्म, अन्न दान, वस्त्रदान आदि करते रहते हैं। आस-पास के सारे गावों में उनकी धाक है। घर के ही नहीं तो गांव के और पड़ोस के गाव के लोग भी उनसे घबराते हैं। लोगों से अपनी खुशामत सुनते रहते हैं। लोग उनको महान समझे यही कालीनाथ राय चाहते हैं। उनके आसपास वही लोग रहते हैं जो उन्हें महान समझते हैं - "हमारे जमींदार रायवंश के रत्न हैं। भक्तशिरोमणि, देवी के अनन्य उपासक - सतयुग में बलि, तेत्रा में रतिदेव, द्वापर के कर्ण और कलियुग में कालीनाथ राय। चालीस कोस में ऐसा दानी, ऐसा उदार और कोन है ? याद नहीं, जब पोते की कल्याण-कामना के लिए मां की पूजा की थी, तब ब्राहमण सन्यांसी, भिखारी जिसने जो चाहा पया वही, रायवंश के जमींदार····[13]

कालीनाथ राय अपने आपको देवी माँ का अनन्य भक्त समझते हैं इतना ही नहीं तो देवी माँ मुझे प्रसन्न है वह सपने में आकर आदेश देती है, यह भी वे कहते हैं। उनके सपने के अनुसार देवी माँ ने उन्हें आदेश दिया है कि तुम्हारी बहू उमा के रूप में मैं तुम्हारे घर में वास कर रही हूं। तभी से कालीनाथ राय अपनी बहू को देवी माँ समझने लगते हैं। उनका यही भ्रमनाटक के अंत तक टूटता नहीं है। उमा, सावित्री, सुरेन्द्र सब उन्हें समझाना चाहते हैं पर वे घर में किसीकी भी सुनते नहीं, यही झूठा विश्वास लेकर वह उमा को पूजागृह में बन्द कर देते हैं - "इतने दिन तुमने बताया क्यों नहीं, माँ। मैं व्यर्थ पत्थर की प्रतिमा प्रतिष्ठित करने की तैयारी में लगा रहा और साक्षात् जगदम्बा मेरे घर में बैठी रही।"[14]

उमा तड़प तड़पकर कहना चाहती हैं कि मैं देवी माँ नहीं हूँ, पर कालीनाथ राय के आगे किसीकी कुछ नहीं चलती है। अपनी महानता सिध्द करने के लिए ही कालीनाथ राय आस-पास के गाँवों में भी लोगों को भेजते हैं कि वे वहाँ जाकर कहे कि कालीनाथ राय के यहाँ साक्षात् देवी माँ अवतरित हुई है। "माँ स्वयं स्वप्न में आकर मुझे सब कुछ बता गई। छोटी बहू के रूप में वे स्वयं मेरे घर

में अवतरित हुई है। मैं अब इसी जीवित प्रतिमा की प्रतिष्ठा करूंगा। माँ का यही आदेश है····।"[15]

कालीनाथ राय अपने घर, गाँव के सब लोगों के लिए प्रीतिभोज का भी आयोजन करते हैं। जिसमें अन्नदान तथा वस्त्रदान किया जाता है। रूपये भी बाँटे जाते हैं। इन सब कृतियों के पीछे कालीनाथ राय का महानता का व्यामोह छिपा हुआ है उनका देवी माँ सपने में आने का, तथा उमा के रूप में देवी माँ घर में अवतरित होने के भ्रम _ _ टूटता ही नहीं है। लाख कोशिशों के बाद भी वे अपने इस झूठ भ्रम के बाहर नहीं आते हैं।

कालीनाथ राय की इसी अन्धविश्वास और महानता के खातिर अनु बीमारी में बिना औषधों के मर रहा है सावित्री उसे दवा देने के लिए उनकी प्रार्थना करती है पर देवी माँ के भरोसे कालीनाथ राय अनु को दवा नहींदेने देते। "हरे हरे" कैसा अनर्गल प्रताप है तुम्हारा। देवी में अविश्वास, देवी जो कहेगी, वही हम करेंगे। देवी जगदंबा है, माँ है। मां के रहते सन्तान का कुछ अनिष्ट नहीं हो सकता।"[16]

महानता के व्यामोह के कारण ही कालीनाथ राय इन झूठे विश्वासों से बाहर नहीं आना चाहते हैं। इस महानता के व्यामोह ने कालीनाथ राय को इतना घेरा है कि अनु के मृत्यु के बाद भी उनकी आँखे नहीं खुलती हैं। कालीनाथ राय का अपने देवी माँ पर इतना विश्वास है कि अनु संज्ञाहीन हो जाता है पर भी कालीनाथ राय कहते हैं - "बुखार नहीं बढ़ रहा है, बड़ी बहु, अन्दर का विकार निकल रहा है। जब विकार पूरी तरह निकल जाएगा तभी अनु ठीक होगा।···तुम अन्दर जाओ, बड़ी बहु। और वैद्यजी, आप भी अपने घर जायें। मेरे घर में आपका कोई काम नहीं है।"[17]

"बन्दिनी" नाटक का एक प्रमुख नारी पात्र उमा है। इस नाटक में उमा धार्मिक संभ्रान्ति तथा व्यामोह से पीड़ित दिखायी देती है। धार्मिक संभ्रान्ति में रोगी अपने आपको "परमात्मा का अवतार" या "भगवान का दूत" समझते है।

ये समझते हैं कि उनका जन्म संसार की रक्षा के लिए ही हुआ है। धार्मिक व्यामोह से पीड़ित व्यक्ति अनेक प्रकार के उपदेश भी देते रहते हैं।

"बन्दिनी" नाटक की उमा अपने आपको ईश्वर का अवतार ही नहीं तो खुद मैं देवी माँ हूं " ऐसा दावा करती है। अपने पति को भी वह छूने नहीं देती। इतना ही नहीं उसे पहचानने से इन्कार करती है। "नहीं, नहीं, मुझे लगता है कि मैं तुम्हारी पत्नी नहीं हूं, देवी हूं।"[18]

जो उमा अनु पर अपने बेटे की तरह प्यार करती थी वह उमा अनु को अपने पास तक आने नहीं देती। अनु चाची। चाची।। करके बीमार पड़ जाता है पर उसकी जरा दया भी उमा को नहीं आती। अनु की माँ सावित्री कहने आती है कि तुम्हारे बिना अनु तड़प रहा है पर उमा देवी के शब्दों में मानो कहती है - "नहीं । मैं देवी हूं···और देवी किसी नाते-रिश्ते को नहीं मानती। वह माया-मोह के बन्धनों से उपर है। तुम इस समय चरणामृत लेकर जा सकती हो···।"[19] जिस अनु को उमा एक माँ की तरह प्यार करती थी वही उमा उसे ज्वर में तड़पते छोडकर सिर्फ चरणामृत देकर अच्छा करना चाहती है। उसका विश्वास है कि वह देवी माँ है और इसी कारण बिना औषधी के अनु ठिक होगा।

उमा यह भी समझती है कि सारे गाँव के लोगों का कल्याण करने का काम उसीका है। लोग संकट में है और उनका संकट निवारण करने का काम सिर्फ उमा ही रक सकती है। उमा का ख्याल है कि बसु के बेटे को नौकरी उसीके कारण मिली है, पूंटी का बेटा उमा के चरणामृत से ही अच्छा हो गया है, विश्वेश्वरी की बेटी जो प्रसव वेदना से पीड़ित थी उसने भी उमा के चरणामृत के कारण ही फुल-सी बच्ची को जन्म दिया है। ये सब बाते उमा देवी होने के कारण ही कर सकी है।यह झूठा विश्वास उमा के मन में पैदा होता है। सुरेन्द्र उसे वहाँ से लेने आता है। वह शहर में जाकर उमा के साथ वैवाहिक जीवन जीना चाहता है। पर उमा उसके साथ नहीं जाती। उमा कहती है इस गाँव के लोगों का कल्याण उस पर निर्भर है उन लोगों को छोड़कर वह कही नहीं जा सकती।

उमा :(अल्पविराम) क्योंकि जा नहीं सकती। मेरे जाने पर उनका क्या होगा?

सुरेन्द्र : (अल्पविराम) किनका ?

उमा : (अल्पविराम) उन्हीं का, जो····जो मुझसे इतना विश्वास रखते हैं जो मेरी कृपा के सहारे जी रहे हैं ?"[20]

लाख कोशिशों के बावजूद भी उमा अपने इस व्यामोह से बाहर नहीं आती वह खुद को तो महाकाली समझती है ही पर पति से भी कहती है - "मैं अनजान नहीं बन रही। मैं महाकाली हूं और तुम मेरे पति शिवशंकर हो तो, फिर यहां से भागे क्यों ? दोनो मिलकर हम सारे संसार का कल्याण कर सकते हैं। बिना दवा के अनु उमा की गोद में तड़प रहा है फिर भी उमा उसे दवा नहीं देती है। अनु की जान जा रही है और उमा यमराज को आदेश दे रही है - "यमराज, अनु के प्राण लौटा दो। सुनते हो, मैं महाकाली तुम्हें आज्ञा दे रही हूं। मैं महिषासुरमर्दिनी हूं। मैंने शुंभ निशुंभ का नाश किया है। मैंने रक्तबीज को बीजशेष किया है। मैं वही महाचण्डी हूं। मेरे आदेश का पालन हो।"[21]

इससे हम देख सकते हैं कि उमा कितनी अन्धविश्वास के अधीन हो गयी है। वह देवताओं को भी आदेश देती है, खुद को महाकाली समझती है। यह एक प्रकार की व्यामोह अवस्था ही है। उमा के इस झूठे विश्वास के कारण सारे घर का विनाश हो जाता है। अनु मर जाता है। उसके कारण उसके मॉ-बाप टूट जाते हैं1 खुद उमा भी आत्महत्या करती है।

तीव्र विषाद

"बन्दिनी" नाटक के स्त्री पात्र उमा में तीव्र विषाद अवस्था पायी जाती है।विषाद विकृति की अवस्था में व्यक्ति में अपराधी के लक्षण पाये जाते हैं। उसमें निद्रा का अभाव, तीव्र वेदना, मानसिक अपराध आदि लक्षण दिखायी देते हैं। यह व्यक्ति अपने आपको अपराधी तथा हीन समझने लगात है। वह आत्महत्या करने का प्रयासभी करता है।

"बन्दिनी" नाटक की उमा जमींदार कालीनाथ राय की बहु है। कालीनाथ राय को एक दिन सपने में देवी माँ आदेश देती है कि तुम्हारी छोटी बहू उमा के रूप में मैं खुद तुम्हारे घर में अवतरित हुई हूं, तुम उसी रूप की पूजा करो।" तब कालीनाथ राय उमा को देवी माँ समझकर पूजागृह में बिठाते है और उस पर किसी से मिलने के लिए पाबन्दी लगाते हैं। उमा भी अपने आपको देवी माँ तथा काली माता, महाकाली समझने लगती है। उमा अपने इस अन्धश्रध्दा के जाल में इतनी फँसती जाती है कि वह अपना पति, घर-संसार सब भूल जाती है। जेठानी का बेटा अनु उसके लिए तड़पता है पर उसे भी उमा अपने पास नहीं आने देती। विश्वेश्वरी की बेटी, पूंटी का बेटा और न जाने कितने लोगों को उसने अच्छा किया है। उनके संकटों को दूर किया है। यह सब उमा का दावा झूठा ही है। सुरेन्द्र उसे बार-बार बताना चाहता है कि तुम देवी नहीं हो पर उमा इस बात को मानती ही नहीं।

अनु की हालत दिन-ब-दिन गिरती ही जाती है। वह चाची के लिए बीमार पड़ जाता है। उमा उसे दवा तक पिलाने नहीं देती। अपना चरणामृत ले जाकर देने का आदेश देती है। अनु तेज ज्वर के कारण बेहोश हो जाता है। फिर भी उमा वैद्यजी की दवा देने से इन्कार करती है। यमराज तथा देवी माँ को भी आदेश देती है कि वे अनु के ज्वर को हटा दे पर अनु संज्ञाहीन हो जाता है। सावित्री उसकी मां बार-बार उमा को कोसती रहती है। अनु की यह अवस्था देखकर उमा विव्हल हो उठती है। उमा यमराज को आदेश तक देती है उसके अनु के प्राण वह वापस लौटा दे। वह यह भी कहती है कि अनु के बिना मैं जी नहीं सकूंगी।" यहाँ पर उमा मे पश्चाताप की भावना होने लगती है। वह अनु के प्यार के सहारे इस व्यामोहात्मक स्थिति से बाहर आना चाहती है। पर अब देर हो चूकी है।

बिना दवा के कारण अनु की जान उमा के आँचल में ही चली जाती है। इस बात का सदमा उमा सह नहीं सकती और तब वह अपना अंधविश्वास और व्यामोह से बाहर आती है। उसमें तीव्र विषाद पाया जाता है - "स्वप्न झूठा था। हां, स्वप्न झूठा था। देवता की वेदी पर रक्त नहीं बह सकता मैं देवी नहीं

हूँ। मैं अपने अनु को नहीं बचा सकी। मेरी आत्म-प्रवंचना से एक वंश नष्ट हो गया। जिसको मैं प्यार करती थी उसीको अपने हाथ से मार डाला। अपनी वेदी पर ही अपने प्रिय कि बलि चढ़ा दी। मेरी अपनी ही करतूत ने मुझसे वह छिन लिया जो मुझे प्रिय था। अब मुझसे जिया नहीं जा सकेगा। मेरे प्रभु। अब कोई कारण मेरी रक्षा नहीं कर सकेगा।"[22]

वस्तुतः उमा में आत्महीनता के कारण तीव्र विषाद पाया जाता है जिसके कारण नाटक के अंत में वह पूजा घर की पैरियां उतरकर गंगा की ओर जाती है। अपना देह गंगाजी को समर्पित करती है। विषाद के कारण ही वह आत्महत्या करती है। यह उमा के अपराध भावना के कारण ही आत्महीनता पैदा हो गयी थी यही दिखाया देता है। अपराध भावना के कारण ही विषाद विकृति पायी जाती है जिसका पर्यवसान मृत्यु के सिवा और कोई नहीं है।

यौन विकृतियाँ

यौनेच्छा मानव की एक महत्त्वपूर्ण मूल प्रवृत्ति है। मनुष्य सामाजिक प्राणी है अतः वह अपनी यौनेच्छा की पूर्ति के लिए विपरीत लिंगी व्यक्ति कीओर आकर्षित होता है।यह यौनेच्छा व्यक्ति को विपरित लिंगी साथी के साथ पूर्वसंभोग क्रीडा (fore play) तथा संभोग (Caitus) करने की प्रेरणा देती है। वास्तव में यौन (Sex) एक ऐसी बहुत ही बलशाली इच्छा (Drive) जिसे पूर्णतः दबाना संभव नहीं होता। इसे कुछ समय के लिए स्थगित किया जा सकता है। एक साधारण व्यक्ति यौनेच्छा की संतुष्टि में आनंद अनुभव करता है। जब व्यक्ति कि यौनेच्छा की पूर्ति में कोई अवरोध या बाधा आ जाती हे तो उसके व्यवहार में असामान्यता आ जाती है। यौनेच्छा पूर्ति हेतु यह असामान्य व्यवहार प्राकृतिक नियमों के अनुसार संगत हो सकती है परन्तु व्यक्ति और समाज के दृष्टिकोण से यह अवांछित मानी जाती है। जब यौनेच्छा की पूर्ति में कोई बाधा आती है और व्यक्ति उसे पूरा नहीं कर पाता तो उसके मन में भारी तनाव (Tension) आ जाता है। तब वह अपने तनाव को कम करने के लिए सामाजिक मान्यताओं की चिन्ता न करके अपने ही

ढंग से यौनेच्छा की पूर्ति करने का प्रयास करता है। व्यक्ति का यौनेच्छा पूर्ति सम्बन्धि का यह असामान्यता व्यवहार ही एक प्रकार की यौन विकृति है।[23]

यौन, लैंगिक विकृतियों के निम्नलिखित प्रकार हैं -

1· हस्तमैथुन

हस्तमैथुन वह लैंगिक विपर्यास है जिसमें स्त्री पुरुष अपनी कामेच्छा की तृप्ति हाथों के माध्यम से करता है। कुछ लोग बुरी संगति के कारण हस्तमैथुन करते हैं तो कुछ लोग मनोरंजन या अकेलापन या जिज्ञासा के कारण हस्तमैथुन करते है।

2· समलैंगिकता

एक ही लिंग के दो व्यक्ति आपस में लैंगिक व्यवहार कर लेते हैं। पुरुष पुरुष में या स्त्री - स्त्री में लैंगिक व्यवहार होता है तो उसे समलैंगिकता कहते हैं। सामाजिक दृष्टि से समलैगिकता को सामाजिक अपराध माना जाता है।

3· मुखलिंग विपर्यास

जब व्यक्ति मुख को लैंगिक इन्द्रिय पर लगाकर लैंगिक आनन्द प्राप्त करता है तो मुखलिंग विपर्यास कहते हैं। हीनता, घृणा तथा आत्मीकरण के कारण मुखलिंग विपर्यास उत्पन्न होता है।

4· स्पर्श आसक्ति

कभी कभी व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से जानबूझकर या अनजाने स्पर्श करते हैं। लैंगिक आनन्द प्राप्त कर लेते हैं। जानबूझकर मेले-तमाशे, आदि स्थलों पर स्त्रियों के स्पर्श का आनंद लेते हैं। संवेगात्मक असन्तुलन, स्नायुविक दूर्बलता तथा हीनता इसके प्रमुख कारण हैं।

5· नग्नतादर्शन आसक्ति

इस प्रकार की विकृति में व्यक्तियों को एक दूसरे को नग्न देखकर ही

लैंगिक आनन्द प्राप्त होता है। स्त्री पुरुष को नग्न देखना चाहती है तो पुरुष स्त्री को नग्न देखना चाहता है।

6· प्रदर्शन प्रवृत्ति

इस प्रकार के विपर्यास में व्यक्ति को लैंगिक सुख की प्राप्ति केवल अपने लैंगिक अंगों को दिखाने मात्र से ही हो जाती है। आधुनिक युग में लड़कियाँ चुस्त कपडे पहन कर अपने अंगों का प्रदर्शन करती हैं। इस प्रदर्शन से उन्हें सुख की अनुभूति होती है। प्रदर्शन प्रवृत्ति के पीछे दमित लैंगिक इच्छाओं का होना होता है।

7· अकामुकता तथा अतिकामुकता

अकामुकता के कारण पुरुषों में कामवासना का अभाव तथा स्त्रियों में कामशैत्य का गुण पाया जाता है। कामशैत्य के कारण स्त्रियों ने लैंगिक क्रिया से चरम तृप्ति का अनुभव नहीं होता। अतिकामुकता में पुरुषों में काम-इच्छा तीव्र होती है।

8· लैंगिक विकृति में मुक्त सहवासिता भी पायी जाती है। पुरुष अनेक स्त्रियों के साथ सहवास करता है और स्त्री अनेक पुरुषों के साथ सहवास करती है। यह सम्बध्द सिर्फ वैवाहिक ही नहीं होते, विवाह बाहय स्त्री-पुरुष के सम्बध्द होते हैं।

मुक्त सहवासिता : यौन विकृति का एक महत्त्वपूर्ण भेद मुक्त सहवासिता है। मुक्त सहवासिता का मतलब है कि इस अवस्था में व्यक्ति अनेक व्यक्तियों के साथ अस्थायी रूप से यौन सम्बन्ध रखता है तो उसे मुक्त सहवासिता कहते हैं। यह मुक्त सहवासिता सामाजिक नियमों के विरुध्द मानी जाने के कारण इस प्रकार का क्रिया कलाप यौन विकृति के अन्तर्गत आता है।

विष्णु प्रभाकर के "टगर" नाटक की नायिका टगर वास्तव में एक परित्यक्ता है। वह शेखर नामक एक साहित्यकार से विवाह करती है लेकिन विवाह के उपरान्त शेखर को ऐसा प्रतीत होता है कि उसकी पत्नी साहित्य के बारे में न कुछ जानती

है न कुछ चर्चा कर सकती है अतः वह उसे त्याग देता है। विवाह के समय टगर का मूल नाम रश्मिप्रभा है। परित्यक्ता रश्मिप्रभा अतिशय दुखी अवस्था में एक दिन ठाकुर के पास पहुँच जाती है। ठाकुर उसे अपनी सेक्रेटरी के रूप में अपने पास रखता है और साथ ही साथ शादी ना करते हुए भी वे दोनों पति-पत्नी के रूप में रहते हैं। "टगर" ठाकुर द्वारा दिया गया उसका दूसरा नाम है। जो इस नाटक में सर्वत्र प्रचलित रहा है। नाटक का शीर्षक भी उसके नाम पर "टगर" ही रखा गया है। ठाकुर की दृष्टि में विवाह एक बुजुर्वाई शिष्टाचार है। ठाकुर अपने मित्र माथुर से भी कहता है कि सामाजिक मान्यता के लिए ही स्त्री पुरुष को पति-पत्नी की अर्थात शादी की आवश्यकता होती है। इसी कारण वह शादी का नाटक ही करते रहते हैं। ठाकुर के शब्दों में - "...हमको कितना नाटक करना पड़ता है यह बताने के लिए कि बहुत जल्दी सचमुच ही हमारा विवाह होने वाला है। नहीं तो दुनिया यही समझती है कि मैं टगर को कहीं से भगा लाया हूं। सेक्रेटरी होने का तो एक बहाना है। यह युवती है और मैं बूढा बैल।"[24] इसमें सन्देह नहीं की टगर और ठाकुर का मुक्त सहवास एक तरह से यौन विकृति का ही रूपान्तरण है।

टगर वास्तव में जासूसी के लिए पुरूषों को अपने जाल में फँसाती है। ठाकुर को भी अपने जाल में फँसाकर वह साबित कर देती है कि ठाकुर एक देशद्रोही तथा आन्तर्राष्ट्रीय दल का तस्कर है। ठाकुर के जीवन की यह बात खुल जाने वह मेजर पुरी के गोली का निशाना बन जाता है। उसका अन्त हो जाता है।

तत्पश्चात टगर माथुर को अपने जाल में फँसा लेती है माथुर भी उससे प्यार करने लगता है उसके साथ शादी करना चाहता है तब टगर उसकी हँसी उड़ाती है। व्यंग्यपूर्ण हँसकर शादी की बात और उन दोनों की भागने की बात सोचकर मजाक उड़ाती है। टगर के शब्दो में - "भागना और शादी करना। खूब। यह तो मैंने सोचा ही नहीं था। (जोर से हँसती है) भागना और शादी करना। शादी करना यानी भागना। पर..."[25] टगर चाहती है कि माथुर एक्झिक्युटिव होने के बाद शादी करे ताकि लोग समझे की टगर के साथ शादी करने के बाद माथुर एक्जिक्युटिव हो गये। माथुर साहब के साथ मुक्त जीवन भोगने के बाद वह

माथुर की रिश्वतखोरी की बात मेजर पुरी को देती है और मेजर पुरी कुसुम की आत्महत्या और रिश्वतखोरी के कारण माथुर को गिरफ्तार करते हैं।

इसी बीच टगर नाजिम के घर भी जाती रहती है। नाजिम के घर में रहकर उसके साथ भी मुक्त साहचर्य स्थापित करती है। नाजिम के विवाह के प्रस्ताव को यकायक ठुकरा देती है। क्योंकि उसे पति शब्द से नफरत हो गयी है। एक दिन वह नाजिम को छोड़कर भी चली जाती है।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि टगर के जीवन में अपने पति के अतिरिक्त ठाकुर, माथुर और नाजिम आ जाते हैं। उनके साथ वह मुक्त साहचर्य युक्त जीवन कुछ काल के लिए बिताती है। इस प्रकार उसकी जीवन प्रणाली मनोविज्ञान की धरातल पर यौन विकृति का ही भेद है।

<u>प्रदर्शन प्रवृत्ति</u>

"ठाकुर" पात्र में भी यौन विकृति दिखायी देती है। "टगर" के हाथों सरे आम अपने माथे पर तेल लगा लेना। अपनी आयु 50 वर्ष की होने के बाद भी एक 25 वर्षीय युवती से प्यार करना इससे ठाकुर की यौन विकृति स्पष्ट दिखायी देती है। ठाकुर के शब्दो में - "हमारा बाकायदा विवाह नहीं हुआ है और टगर अभी भी मेरी सेक्रेटरी ही है, लेकिन हृदय का मिलन तो पूर्ण हो चुका है और विवाह क्या है, दो हृदयों का मिलन। वह नहीं है तो सप्तपदी भी व्यर्थ है।"[26]

लोगों के रहते भी टगर मेरे तो गिरधर गोपाल का गीत गाती है तब भी ठाकुर अपने प्रेम का प्रदर्शन करते दिखायी देते हैं - "उसके प्रेम की तन्मयता, उसका आत्म-समर्पण, वह जैसे मुझ में लीन हो गयी है। मैं ही उसका गिरधर गोपाल हूं और वह है मेरी मीरा।"[27]

टगर और माथुर में प्रदर्शन प्रवृत्ति दिखायी देती है। टगर का मुक्त केशराशि छोड़कर लोगों के बीच से घूमना तथा अत्यधिक श्रृंगार करना, स्नान करके दो-तीन बार लोगों के बीच आना यह सब बाते प्रदर्शन प्रवृत्ति के कारण ही दिखायी देते

है।

मनोरचनाएँ या रक्षायुक्तियाँ

व्यक्ति सामान्य हो या असामान्य। संघर्षों का सामना दोनों को भी करना पड़ता है। जब व्यक्ति संघर्षों से परेशान होता है तो व्याधियों का शिकार बन जाता है। संघर्ष के समाधान के लिए मनोरचनाएँ प्रभावशाली काम करती है। इससे ऐसाही कहा जा सकता है कि जिन विधियों में अन्तर्द्वंद से उत्पन्न समस्याओं का समाधान किया जाता है। उन्हें मनोरचनाएँ कहते हैं। मनोरचनाएँ सुरक्षात्मक उपाय हैं। ब्राऊन के अनुसार "मनोरचनाएँ विविध प्रकार की चेतन व अचेतन प्रतिक्रियाएँ हैं जिनके द्वारा आन्तरिक संघर्षों का निराकरण या न्यूनीकरण होता है।"[28] सरल शब्दों में कहना हो तो, मनोरचना वह मानसिक प्रक्रिया है जिसके माध्यम से इद्म, अहम् तथा परम् अहम् के बीच उत्पन्न संघर्ष को दूर किया जाता है।

मनोरचनाओं का वर्गीकरण दो भागों में किया जाता है - मुख्य मनोरचना- 1· ये वे मनोरचनाएँ हैं जो स्वतंत्र रूप से या तो मानसिक तनाव या संघर्ष को दूर कर देती है या उनकी तीव्रता को कम कर देती है।

2· **गौण मनोरचना** : ये वे मनोरचनाएँ है जो मुख्य रचनाओं की सहायता करती है लेकिन यह स्वयं संघर्ष दूर करने की क्षमता नहीं रखती है।

मुख्य मनोरचना में दमन, शमन, अन्तर्बाधा, प्रतिगमन, रूपान्तरण, उदात्तीकरण युक्तिकरण, प्रतिक्रिया निर्माण आदि मनोरचनाएँ आती है। तथा गौण मनोरचना में आत्मीकरण प्रक्षेपण, अन्नक्षेपण, स्थानान्तरण, विस्थापन, क्षतिपूर्ति, अतिपूर्ति, प्रत्याहार, कल्पना तरंग, वास्तविकता से पलायन नकारात्मकता आदि मनोरचनाएँ जाती है।

1· दमन : दमन के माध्यम से चेतन संपूर्ण का समाधान होता है। इदम् की इच्छाएँ चेतन पर पहुंचना चाहती है पर इसका सम्बन्ध असामाजिक क्रियाओं से होने के कारण अहम् और परम अहम् को यह मान्य नहीं होता। इससे छुटकारा पाने के लिए अहम् उस इच्छा को अचेतन में डाल देता है। इसीको दमन कहते

हैं। दमन क्रिया स्वतः होती है इसलिए व्यक्ति को पता नहीं चलता। इसीसे ही मानव का व्यवहार पहेली रूप में प्रस्तुत होता है। उदा· एक व्यक्ति अपनी, भाभी से अपनी काम-वासना की तृप्ति करने की इच्छा रखता है। लेकिन उसकी यह इच्छा अनैतिक है अतः चेतना इसे स्वीकार नहीं करती जिसके कारण संघर्ष उत्पन्न हो जाता है। इस संघर्ष को व्यक्ति अपने अचेतन में दबा देता है इस प्रकार संघर्ष समाप्त होता है। दमन हमारे मानसिक स्वास्थ्य की रक्षा करता है।

"डॉक्टर" नाटक की नायिका डॉ·अनीला है। डॉ·अनीला एक परित्यक्ता स्त्री है। उसके पति सतीशचन्द्र शर्मा ने उसे अनपढ़ तथा गवार होने के कारण, अपनी सोयटी में ले जाने के लिए लायक न होने के कारण अनीला का त्याग किया है।

डॉक्टर अनीला अपनी छोटी बच्ची शशि को लेकर अपने भाई दादा के घर आती है। उसके पति सतीशचन्द्र ने उसे घर से बाहर निकालकर, उसका त्याग करके जो अपमान किया है उस अपमान की भावना को अनीला ने दमित किया है।

डॉक्टर अनीला अपनी छोटी बच्ची शशि को लेकर अपने भाई दादा के घर आती है। जीवन में आये संघर्ष का समाना एक उदात्त नारी के समान करती दिखायी देती है पर अपनी यौन भावनाओं का दमन उसने किया है जिसका जिक्र नाटक में कहीं भी दिखायी नहीं देता पर नाटक के अंत में वह केशव का सहारा चाहती है। एक पुरुष का सहारा ही उसकी दमित भावनाओं की कमी को महसूस करता है। अपनी चुनौती के कारण ही अनीला ने अपनी भावनाओं को दमित किया है यह खुद अनीला से भी मालूम नहीं है केशव इस भावना को उजागर करता है। "पाच वर्ष से तुम्हे पहचान रहा हूँ। तुम तिल-तिलकर जलती हो, तुम्हारे हृदय में टीसे उड़ती है, तुम्हारी छाती आहों की छलनी हो रही है और इस सत्य को छिपाने के लिए तुम अनथक प्रयत्न करती हो।"[29]

"डॉक्टर" इस नाटक में अनीला के भाई दादा में भी दमन दिखायी देता है। सतीशचन्द्र शर्मा ने अनीला का त्याग करके जो अपराध किया हे, दादा को जो अपमान किया है। दादा उस अपमान का बदला लेना चाहते हैं इस बदले कि भावना के कारण ही अनीला के भाई दादा ने अभी तक शादी नहीं की है। यहाँ पर अपने सुख, सांसरिक भावना तथा यौनभावना का दमन दादा इस पात्र ने किया है। यहाँ भी अपनी बदले की चुनौती के कारण ही दादा ने इस रक्षायुक्ति का सहारा लिए हुए हैं।

रामू की बातों से पता चलता है कि दादा ने अभी तक शादी नहीं की है....."पर मिस साहब! दादा शायद किसीको एकदम काट डालना मांगटा तभी उन्होंने शादी नहीं किया।"[30]

रामू के इस वक्तव्य से दिखायी देता है कि सतीशचन्द्र से बदला लेने के लिए ही दादा ने अभी तक शादी नहीं की है पर यह भी सत्य है कि दादा ने सतीशचन्द्र को मार भी नहीं डाला है। इसका मतलब यही है कि दादा ने अपनी भावनाओं का दमन किया है।

श्री विष्णु प्रभाकरजी के "बन्दिनी" नाटक में उमा की भावनाओं का दमन होता दिखायी देता है। जमींदार कालीनाथ के घर उमा सुरेन्द्र की पत्नी बनकर आती है। जमींदार कालीनाथ राय अपने आपको देवी माँ का भक्त समझते हैं। उमा अपने पति सुरेन्द्र के साथ बड़े प्यार से हँसी - खुशी जीवन बीता रही है। पर एक दिन कालीनाथ राय को सपने में देवी माँ आदेश देती है कि मैं तुम्हारे घर मे उमा के रूप में वास्तव्य कर रही हूं। तुम उसी रूप में मेरी पूजा करना तब से कालीनाथ राय उमा के भावनाओं का खयाल किए बिना उसे पूजागृह में बिठा देते हैं। उमा को देवी मानकर उसकी पूजा करते हैं उसे प्रणाम करते हैं। अपने विवाहित जीवन में खुश रहने वाली भोली-भाली अल्लड़ उमा ये बाते सहन नहीं कर पाती। जो उमा अपने पति सुरेन्द्र से पल भर के लिए भी बिछडना नही चाहती थी वह उमा अब पति के दर्शन के लिए तड़पती रहती है - "जी करता है इसी तरह तुम्हारे वक्ष में मुंह छिपाकर सारे दिन प्रेम का कलकल - नाद सुनती

रहूं।"[31]

उमा को किसीसे भी मिलने नहीं दिया जाता। अपने पति के प्यार के लिए वह खाना-पीना छोड़ देती है। वह अपने पति से कहती है -

उमा : चलो इस क्षण चलो। अब यहां रूकी तो मैं मर जाऊंगी। मुझे पल-पल भारी हो रहा है। मैं तुम्हारे बिना अब और कहीं नही रह सकती। मैं देवी नहीं हूं। मैं देवी कैसी हो सकती हूं कोई पिताजी को समझाता क्यों नही ?

सुरेन्द्र : पिताजी यहां स्वयंभू प्रभु है। उन्हें समझाने का साहस कोई नहीं कर सकता।"[32]

यहाँ हम देखते हैं कि कालीनाथ राय को कोई समझा नहीं सकता है। सारे गांव पर उन्हीं का राज चलता है। घर में भी कालीनाथ राय का हुक्म चलता है इसी कारण उमा की सहायता कोई नहीं कर सकता। यह सब प्रतिकूल परिस्थिति में उमा इस परिस्थिति का सामना नहीं कर सकती तो उसकी भावनाओं का दमन होता दिखायी देता है।

अब वह संसार के मायाजाल में आना ही नहीं चाहती वह खुद अपने आपको देवी मां तथा महाकाली समझने लगती है। वह अपने पति को भी पहचनाने से इन्कार कर देती है। सांसरिक भावनाओं, तथा इच्छा अपेक्षाओं का दमन किया हुआ दिखायी देता है। यहां यह दमन बिना प्रयत्नों के अपने आप हुआ दिखायी देता है। इससे उमा को मानसिक समाधान तथा शान्ति मिलती है।

उमा इस रक्षायुक्ति से अपने जीवन में आयी संघर्ष की स्थिति से बच जाती है। अपनी परेशानियों से बचने के लिए उमा इच्छा तथा भावनाओं को दमित करती है।

2· **शमन**

यह रक्षायुक्ति है जिसके माध्यम से व्यक्ति अपनी इच्छा व प्रयत्न के द्वारा चेतन रूप में ऐसे विचारों, इच्छाओं को दबा लेता है, जो अप्रिय, दुखद व अनैतिक होती है। जो घटनाएँ दुख देती है या प्रत्यक्ष आघात करती है वे विस्तृत हो जाती है। अनजाने में उसका निष्कासन अचेतन मन में किया जाता है। इससे व्यक्ति को संतोष मिलता है। यह अनजाने में हो जाता है तो उसे दमन कहते हैं पर जब यह निष्कासन प्रयत्न के साथ किया जाता है तब इसे शमन कहते है शमन में व्यक्ति यह जानता है कि वह अपनी इच्छाओं या विचारों को चेतना से, कष्टदायक आवेगों व स्मृतियों का विमर्शित शमन कहलाता है। जैसे पिता अपने पुत्र की मृत्यु को जानबूझकर तथा प्रयत्नपूर्वक चेतना से हटा देता है।

डॉ·अनीला का पति अपनी दूसरी पत्नी मरीजा को लेकर संयोगवश डॉ·अनीला के ही अस्पताल में दाखिल होता है। मरीजा को अनीला के अस्पताल में दाखिल होता है। अनीला अस्पताल में आने के बाद उसे यह मालूम हो जाता है कि मरीजा का पति ही उसका पूर्ण पति सतीशचन्द्र शर्मा है तो अनीला उस मरीजा को अपने अस्पतला में रखना नहीं चाहती पर वह बाद में मरीजा को अस्पताल में रखकर उसकी देखभाल भी करती दिखायी देती है। यहां पर अनीला अपनी इस बात को प्रयत्नपूर्वक अपने मन में शमित करती है। मरीजा को हॉस्पिटल से निकालने के बाद जो संघर्ष पैदा होगा उससे बचने के लिए वह मरीजा का इलाज करती रहती है। मरीजा का बेटा गोपाल पर भी उसे बार बार सौत का बेटा होने के कारण गुस्सा आता है पर वह बार बार अपने क्रोध का शमन करती है।

मरीजा का ऑपरेशन न करने का निर्णय लेने के बाद भी अनीला उसका सफल ऑपरेशन करती है। प्रतिहिंसा की भावना का शमन करती है। अनीला का मन उसे बार-बार कोसता रहता है। ये महत्त्वपूर्ण घडी खो देना नहीं चाहता पर अनीला प्रयत्नपूर्वक अपनी इस प्रतिशोध की भावना का शमन करती है।

डॉ॰केशव अनीला से शादी करना चाहते हैं पर अनीला के मन में इस बात का पता भी नहीं है। वह समाज के भय के कारण शादी नहीं करना चाहती। समाज क्या कहेगा इस कारण उसने अभी तक दूसरी शादी भी नहीं की है। अनीला केशव से कहती है, वह बात अब इस आयु में ?....नहीं नहीं केशव। क्या कहेंगे सब" यहाँ पर दिखायी देता है। अनीला ने सांसारिक भावनाओं का प्रतिशोध की भावना का शमन किया है। प्रयत्नपूर्वक उसने उन बातों को टाला है। वास्तव में अनीला की मरीजा सौत होने के कारण अनीला उसे मारना चाहती थी -

अनीता : यह ऑपरेशन मैं नहीं करना चाहती।

दादा : क्यों नहीं करना चाहती ?

अनीता : क्योंकि मुझे डर है कि मैं उसे मार डालूंगी।"[33]

फिर भी अनीला मरीजा को जीवनदान दे देती है। यहाँ पर दिखायी देता है कि अनीला ने अपनी भावनाओं का शमन किया है।

डॉ॰अनीला के भाई दादा अपनी बहन अनीला के परित्याग के कारण दु:खी है। दादा अनीला के पति सतीशचन्द्र शर्मा से बदला लेना चाहते हैं। सतीशचन्द्र शर्मा ने अनीला का त्याग करके दादा का जो अपमान किया है उस अपमान का बदला दादा लेना चाहते हैं। दादा अपने जेब में पिस्तौल लिए घूमते हैं अगर सतीशचन्द्र शर्मा सामने आये तो उन्हें गोली से उड़ा देना चाहते हैं।

पर दादा अपनी इस प्रतिशोध की भावना को प्रयत्नपूर्वक अपने मन से निकाल देते हैं। यहाँ पर भी उनमें शमन की रक्षायुक्ति दिखायी देती है। दादा खुद अनीला के मन की प्रतिशोध की भावना का भी शमन करने का कार्य करते हैं। "मारना। हत्या करना ।।। आज की दुनिया की तरह, तुम भी यही सोचती हो कि बदला लेने का केवल एक ही रास्ता है - हत्या करना। लेकिन मैं कहता हूँ, कि हत्या करना बदला लेना नहीं है, हर्गिज नहीं हैं।"[34]

दादा के अनुसार त्याग में ही मानवता है और अगर बदला लेना ही है तो दूसरों का भला करके उसे झुका देना ही बदला है यही उनकी धारणा है। अनीला के अन्दर के अहम् को भी मिटाने का कार्य दादा करते हैं - "यही कि इस आकाश के नीचे सबके रहने के लिए जगह है, लेकिन फिर भी न जाने क्यों हम अपनी जगह छिन जाने के डर से मरने मारने को तैयार रहते हैं।"[35]

यहाँ पर हमें दिखायी देता है कि एक कर्नल होकर भी दादा अपने मन की प्रतिशोध की भावना को किस कदर मिटाया है यही शमन रक्षायुक्ति है।

4· उदात्तीकरण

हमारी कुछ इच्छाएँ होती है, जो सामाजिक बंधनों और मर्यादाओं के कारण पूर्ण नहीं होती, तब इस मनोरचना के माध्यम से समाज द्वारा मान्य तरीकों में अभिव्यक्त होती है। उदात्तीकरण से न केवल विफलता से बचाव होता है बल्कि समाज में प्रतिष्ठा भी प्राप्त होती है। उदा·तुलसीदासजी की जब उनकी पत्नी ने भर्त्सना की तब वे भगवान के प्रति समर्पित हो गये, जिससे उनको एक नयी प्रतिष्ठा मिली।

"डॉक्टर" नाटक में डॉक्टर अनीला एक परित्यक्ता नारी है। उसके पति सतीशचन्द्र शर्मा ने अनीला अनपढ़ गवार होने के कारण उसका त्याग किया है1 एक छोटी बच्ची शशि को लेकर उसके पति ने अनीला को घर से बाहर निकाल दिया है। अपनी पत्नी और छोटी बच्ची को घर से बाहर निकालते हुए सतीशचन्द्र को जरा भी शर्म महसूस नहीं होती है।

अनीला अपनी इस समस्या से खुद झगड़ती है। वह अपने भाई दादा के पास जाकर आगे पढ़-लिखकर एक डॉक्टर बन जाती है। अपने जीवन में हार जाने के बाद वह अपने जीवन की दिशा ही बदल देती है। अपने आपको हीनता की तरफ नहीं जाने देती तो अपने जीवन का मार्ग उदात्तीकरण की ओर मोड़ लेती है।

अनीला अपने जीवन में इस हार के कारण, परित्याग, प्रतिशोध कि चुनौती के कारण ही इतनी उदात्त होती दिखायी देती है। वह दिन रात लोगों की सेवा करना चाहती है। लोगों की भलाई कमाना चाहती है। तभी तो वह आकाश के सूरज की तरह लोगों के भलाई के लिए जीना चाहती है - रामू के वार्तालाप से अनीला के चरित्र की उदात्तता को देखा जा सकता है "अपन भी यही बोला। अपन ने कहा सूरज देवता है देवता कभी नहीं सोता., कभी नही थकता। दीदी एकदम बोला, वह भी देवता बनेगा। फिर कभी नही थकेगा। कभी नहीं सोयेगा इसका मतलब यही है कि अनीला मे उदात्तीकरण की भावना है। परित्यकता होने के बावजूद भी उसने समाज में एक प्रतिष्ठित स्थान पा लिया है। आज वह एक जानीमानी डॉक्टर है। मरीजों को मौत के मुँह से वापस लाने के लिए माहीर है।

सतीशचन्द्र शर्मा ने त्याग देने के बाद भी अनीला ने अपने चरित्र को उदात्त तथा सम्पन्न बनाया है। आत्महीनता की चुनौती के कारण की हुई रक्षायुक्ति ही है।

विष्णु प्रभाकर के "टगर" नाटक में "टगर" का भी उदात्तीकरण अंशतः दिखायी देता है। पर टगर का उदात्तीकरण राष्ट्र के लिए उदात्त हेतु रख कर किया गया है।

टगर एक भोली भाली औरत थी। उसका नाम रश्मिप्रभाथा। उसकी शादी एक साहित्यिक शेखर से हुई थी पर जब शेखर को पता चला कि उसकी पत्नी गवार, अनपढ है वह साहित्य के बारे में कुछ भी नहीं जानती। तो शेखर ने उसे अपने लायक न पाने के कारण उसका त्याग किया। टगर इसी आत्महीनात के कारण दर दर भटकने के लिए मजबूर हो गयी। प्रतिशोध की चुनौती के कारण उसने भी एक रास्ता अपना जो बूराई की मार्ग से जाता था पर उसका हेतु ही अच्छा था।

हम देखते हैं कि टगर परित्यक्ता होने के बाद ठाकुर को ढूँढ निकालती है वह अपने पति शेखर का बदला सभी पुरुष जाति से लेना चाहती है। इसी

कारण वह ठाकुर के पास जाती है। उससे प्यार का नाटक करके ठाकुर के बारे में सब पता लगाती है। ठाकुर उपर से लोकगीतों का व्यापार करता है। पर अन्दर में वह एक समाज का दुश्मन है। सीमा प्रदेश में तस्करी करनेवाला व्यक्ति है यह सब जानकारी वह मेजर पुरी को देती है। मेजर पुरी से ठाकुर को मरवा डालती है।

तत्पश्चात टगर माथुर के पास आती है। माथुर के कारण दो स्त्रियों ने आत्महत्या की है। माथुर खुद ठेकेदारी में रिश्वत लेता है। यह जानकारी भी टगर ही मेजर पुरी को दे देती है। समाज में रहने वाले इन दरिन्दो के नकाब को उतार देती है। ऐसा करते हुए टगर का भवितव्य भी उजड़ जाता है। समाज उसे भी बुरी नजरों से देखता है। उसे भी समाज के ताने सुनने पड़ते हैं।

यहाँ पर बारिकी से देखा जाय तो यहाँ भी दिखाया देता है कि टगर का खयाल यही है कि पति ने तो परित्याग करके उसे समाज से बाहर निकाल ही दिया है पर अपने इस जीवन को लेकर जीने के बजाय देश के लिए कुछ करके देश के काम आने का प्रयत्न टगर ने किया है। यह एक तरह से टगर का यह उदात्तीकरण ही है।

5· **स्थानांन्तरण** ::

मानसिक संघर्ष से बचने के लिए प्रायः स्थानान्तरण का सहारा लिया जाता है। ब्राऊन के अनुसार - "स्थानान्तरण वह मानसिक प्रक्रिया है, जिसके द्वारा भावना एक व्यक्ति विशेष से हटकर या वस्तु-विशेष से हटकर दूसरे वस्तु विशेष पर चला जाता है।"[36]

विष्णु प्रभाकर के टगर इस नाटक में "टगर" का भी स्थानान्तरण दिखायी देता है। टगर अनपढ़ गवार होने के कारण उसका पति शेखर उसका त्याग करता है। टगर साहित्य के बारे मे कुछ भी नहीं जानती यह देखकर शेखर को लगता है कि वह हाय सोसायटी में उठ-बैठ नहीं सकेगी। इसी कारण शेखर अपनी पत्नी

टकर का त्याग करता है। टगर अपने पति शेखर का बदला लेना चाहती है। वह अपने पति का बदला लेना चाहती है पर वह जब ऐसा नहीं कर सकती तो उसकी इस प्रतिशोध की भावना का स्थानान्तरण हो जाता है अपने पति शेखर की बदला लेने के बजाय वह ठाकुर, माथुर और नाजिम जैसे पुरुषों का बदला लेती है। शेखर नाजिम के यहाँ टगर को मिलता है तब इस बात का पता चलता है - "तभी तो प्रतिहिंसा की आग भभक उठी थी। मैंनें उसकी हत्या करने का विचार किया था। सोचा था, पुरुष जाति से बदला लूंगी। उसने मुझे एक बार छोड़ा है, मैं बार-बार पुरुषों को छोडूंगी। एक के बाद, एक जो मैं इन भ्रष्टाचारियों को फँसाती चली गयी, वह मात्र संयोग नहीं था नाजिम साहब।"[37]

इस वार्तालाप से पता चलता है कि टगर पहले सिर्फ अपने पति की हत्या करके बदला लेना चाहती थी। पर ऐसा कर न सकी तो उसकी भावनाओं का स्थानान्तर हो गया उसने अपने जीवन में आये ठाकुर, माथुर और नाजिम जैसे पुरुषों का बदला लिया।

6· **प्रेक्षपण या आरोपण**

प्रक्षेपण के माध्यम से व्यक्ति अपराध भावना से छुटकारा प्राप्त करता है। इसके द्वेश भावनाओं का आरोपण, अनैतिकता का आरोपण, कामेच्छा का आरोपण पाया जाता है। द्वेष भावना, बेइमानी अश्रध्दा तथा खुद चरित्रहीन होने के बाद भी दूसरों पर चरित्रहीनता का आरोप करना। आरोपण के अतिरिक्त रूप में व्यक्ति हर समय यही सोचता है कि लोग उसके खिलाफ षडयंत्र कर रे हैं उसे नीचा दिखाना चाहते हैं।

"टगर" नाटक में माथुर में यह रक्षायुक्ति पायी जाती है। माथुर टगर से प्यार करता है। खुद माथुर ने अनेक स्त्रियों के साथ सम्बन्ध रखा है। स्त्रियों को धोखा दिया है उसी कारण वह टगर से भी शक करता रहता है। उसकी पहली वाग्दत्ता पत्नी ने आत्महत्या की है। दूसरी से शादी की है। तीसरी नर्स कुसुम है जिससे उनका इश्क चला रहा है और चौथी टगर है जिसे माथुर गवाना नहीं चाहते। इसके बावजूद भी वे रिश्वतखोर हैं। ठेकेदारी के मामले में रिश्वत लेते हैं। इतनी

बुराइयों के बाद लोग उससे कतराते है। माथुर के बुलाने पर भी लोग नहीं आते। पर माथुर अपने अपराधों का आरोपण दूसरों पर करके रक्षायुक्ति का सहारा लेते हैं..."असल मे वे मुझे सताना चाहते हैं लेकिन वे नहीं जानते कि मैं किस मिट्टी का बना हूं। मैं....मैं...चाहू तो सबकी पसोल खोल दूं। शराब पीकर लोग रोज रात को लड़ते हैं और डॉक्टर की जेब भरते हैं। जो घायल होता है वह चाहता है घाव खूब गहरा लिखा जाना चाहिए। जो घायल करता हैं वह चाहता है घाव को बहुत साधारण बताया जाय। दोनेां डॉक्टर को रिश्वत देते हैं।"[38] यहां पर यही दिखायी देता है कि माथुर खुद शराब पिता है, अनेक स्त्रियों के साथ रहता है, खुद रिश्वत खाता है पर ये बात लोगों पर जाहीर होने के डर से सुरक्षात्मक उपाय अपना लेता है। लोगों पर अपने दोषों का आरोपण करता है। दूसरों पर आरोप करके वह अपना बचाव करना चाहता है।

1· **युक्तिकरण** : जब व्यक्ति अपनी काम वृत्ति सम्बन्धी इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर पाता तो वह युक्तिकरण का सहारा लेता है। जैसे "अंगूर नहीं मिले तो, "अंगूर खट्टे हैं" कहना अर्थात वह अचेतन की पूर्ति करने के लिए अपने को धोखे में डालता है। कमियों को और बुराइयों को छिपाने का प्रयास करता है। युक्तिकारण मनोरचना के माध्यम से व्यक्ति या तो परिस्थिति को पुनः परिभाषित करता है या बाहय संसार की प्रकृति में ही परितर्वन कर लेता है। इस विधि के द्वारा दुःखद परिस्थितियों को सुखद बना लेने का प्रयास करता है। जैसे अपनी वस्तुओं को बहुमूल्य बताने की कोशिश करना, अपनी वस्तु कमी अधिक तारीफ करना आदि क्रियाओं से खुद को भुलावे में डालना।

विष्णु प्रभाकर के "टगर" नाटक में ठाकुर पात्र में यह रक्षायुक्ति दिखायी देती है। माथुर एक 50 साल का बूढा है। वह अपनी बेटी जैसी 25 वर्षीय टगर को अपनी सेक्रेटरी बनाता है। वह खुले आम टगर के साथ प्यार का प्रर्दान करता है किसी के देखने पर "हम झूठे शिष्टारों में विश्वास नहीं करते" यही बताता है।[39]

टगर जैसी युवती ठाकुर जैसे आदमी के साथ खुश नही रह सकती क्योंकि टगर युवती है तो ठाकुर बुढ़ा बैल है पर अपने को और लोगों को भुलावे में डालने के लिए वह कहता है - "तभी तो प्रेम का रहस्य जानने वाली नारियाँ प्रौढ पति चुनती है।"[40] नारी सिर्फ बातों से संतुष्ट हो सकती है यह भी उनका युक्तिकरण है।

माथुर खुद भ्रष्टाचारी है। वह देश का द्रोही है, दुश्मन है। आन्तर्राष्ट्रीय तस्कर है। देश के स्वार्थ के कारण बेचनेवाला नीच व्यक्ति है। पर वह उसके विपरीत युक्तिकरण का सहारा लेता है। लोगों को और खुद को भुलावे में डालने के लिए लोकगीतों को खरीदने का व्यापार करता है। यह तो एक बहाना है। वह ऐसे दिखाता है कि वह एक अच्छा आदमी है..."हां तो मेजर साहब, मैं कह रहा था कि किसी भी देश को बाहरी शत्रुओं से इतना डर नहीं होता जितना आस्तीन के सांपों से। मेजर साहब, ये तस्कर नाग है, नाग।"[41]

यहाँ पर दिखायी देता है कि ठाकुर खुद में जो बुराइयाँ पाता है उसके विपरीत स्थिति का सहारा लेता है। वास्तव में वह खुद अपने आपको भुलावे में रखना चाहता है। और समाज और कानून से बचना चाहता है।

काम भावना में भी उसकी काम भावनाओं की पूर्ति नहीं होती। टगर उसके वश में नही रह सकती। यह बात ठाकुर जान जाता है। जब वह टगर की ओर अपनी भी कामभावनाओं की तृप्ति नहीं कर सकता तो उसके विरूध्द युक्तिकरण का सहारा लेकर खुद को धोखे में डालता है - "उसके प्रेम की तन्मयता, उसका आत्म समर्पण, वह जैसे मुझ में लीन हो गयी है1 मैं ही उसका गिरधर गोपाल हूँ और वह है मेरी मीरा।"[42]

इन सब घटनाओं से और वार्तालाप से यही दिखायी देता है कि ठाकुर अपनी असलीयत की पोल खुल न जाये इस कारण अपने आप को और लोगों को युक्तिकरण का सहारा लेकर भुलावे में डालता है।

8· **क्षतिपूर्ति** :

क्षतिपूर्ति के बारे में डॉ·पद्मा अग्रवाल लिखती है, "जो" व्यक्ति शरीर से दुर्बल और कृषित है, किन्तु पौष्टिक भोजन का सेवन कर और व्यायाम द्वारा अपनी नियमित आदत अभ्यास से शरीर-सम्बन्धी दुर्बलता या कमी की पूर्ति करता है तो उसकी पूरक क्रिया वांछित समझी जाती है। यह प्रत्यक्ष है। जब व्यक्ति अपनी शारीरिक दुर्बलता अथवा कमी की पूर्ति बौध्दिक क्षेत्र में विशेष योग्यता प्राप्त करता है तब यह पूरक प्रयास परोक्ष है। शारीरिक कमी को पूरा करने के लिए बुध्दि का विशेष विकास करना और सफलता प्राप्त करने का प्रयास करना सदैव से वांछित माना गया है। प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस प्रकार कोई व्यक्तिगत और सामाजिक - दोनों ही दृष्टियों से वांछनीय और शोभनीय है। क्षतिपूर्ति के माध्यम से व्यक्ति अपनी हीनता व अनुपयुक्तता की भावना से रक्षा करता है।

टगर एक परित्यक्ता नारी है। उसे उसके पति शेखर ने इसलिए छोड़ दिया है कि टगर एक गवार नारी है। वह साहित्यिक पति शेखर के साथ साहित्य के बारे में बातें नही कर सकती है। इसी कारण शेखर ने टगर का त्याग किया है। टगर के शब्दों में - "वह चाहता था कि मैं भी उसकी तरह साहित्य की बाते करूं। काफ्का, कामू और सार्त्र के दर्शन पर बहस करूं।"[43] पर टगर ये सब बातें नहीं कर सकती वह एक अनपढ़ औरत थी।

पति शेखर के त्याग देने के बाद टगर ठाकुर के साथ रहने लगती है। ठाकुर एक बूढ़ा आदमी है। पर वह लोग गीतों का व्यापार करता है। इस कारण ठाकुर को गाव-गाव घूमना पडता है। टगर एक युवती होने के कारण ठाकुर उसकी हर बात को मानता है। टगर यहाँ अपनी हीनता ग्रन्थि की क्षतिपूर्ति करती दिखायी देती है। ठाकुर के सहवास में टगर को पढ़ने के लिए किताबे मिलती है। वह साहित्य के बारे में जानकारी लेती है। जिस कारण उसे अपने पति से बिछडना पडा था उनकी पूर्ति टगर कर लेती है। वह कहती भी है की, "मुझे इससे दो लाभ हुए, समझदार पति ही नहीं मिला, स्वतंत्रता भी मिली। मैंने खुब साहित्य-

पढा -काफ्का का, कामू और सार्त्र को भी पढ़ा। बाते कानी भी सीखी। जो तब नही कर सकी थी, अब किया।

यहाँ दिखायी देता है कि टगर ने जो सहा है और परित्यक्ता होने की अपमान को सहा है उसकी क्षतिपूर्ति टगर ने साहित्य पढकर की है।

नि ष्क र्ष

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है -

1. श्री विष्णु प्रभाकर ने अपने नाटकों में सामान्य तथा असामान्य मनोविज्ञान के अन्तर्गत नाटकों में प्रयुक्त पात्रों के विविध मनोविकारों तथा मनोविकृतियों को चित्रित किया है।

2. प्रस्तुत अध्याय में मुख्यतः मानव के असामान्य (Abnormal) व्यक्तित्व को परिलक्षित करते हुए मानव में निहित अनेक विकृतियों को दर्शाया गया है।

3. जब मानव सामान्य व्यक्ति के अपेक्षा असामान्य व्यवहार करने लगता है तब उसमें कुछ विकृतियाँ उत्पन्न होती हैं।

4. प्रस्तुत अध्याय में मुख्यतः मनःस्नायुविकृतियों, कार्यपरक विकृतियों तथा यौन विकृतियों को नाटककार ने प्रासंगिक रूप में दर्शाया है।

5. मनःस्नायुविकृतियों के अंतर्गत चिन्ता, युध्द, मनःस्नायुविकृतियों की तथा मनःभ्रान्ति का यथार्थ चित्रण नाटकाकर के प्रतिभा का परिचायक है।

6. कार्यपरक विकृतियों के अंतर्गत मनोविदालता, उत्साह-विषाद तथा व्यामोह या संभ्रान्ति विकृतियों के दर्शन सहज ही उल्लेखनीय हैं।

7. यद्यपि मनोविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में यौन विकृतियों के अन्तर्गत प्रायः समलैंगिकता, स्पर्श आसक्ति, मुखलिंग विपर्यास, नग्नता दर्शन, आसक्ति आदि तथ्य आते हैं। लेकिन विष्णु प्रभाकर के विवेच्य मनोवैज्ञानिक नाटकों में यौन

विकृति के अन्तर्गत प्रदर्शन प्रवृत्ति और मुक्त सहवासिता के ही दर्शन होते हैं। नाटककार के यौन विकृति चित्रण में कहीं पर भी अश्लिलता की गंध महसूस नहीं होती है। जो नाटककार के संयत व्यक्तित्व का ही महत्वपूर्ण भाग है।

विभिन्न मनोविकृतियों वाले पात्र मुख्यतः असामान्य (Abnormal) ही है।

8· नाटककार ने पुरुष पात्रों की अपेक्षा नारी पात्रों की मनोविकृतियों पर अधिक बल दिया है।

9· वास्तव में मानव मानव ही है। अतः असामान्य पात्रों में जो विविध प्रकार की मनोविकृतियाँ उत्पन्न हुई दिखायी देती है उनसे बचने का प्रयास भी कुछ असामान्य पात्र करते दिखायी देते हैं। इस बचने के प्रयास को मनोविज्ञान के शब्दावली में मनोरचनाएँ या रक्षायुक्तियाँ कहा जाता है।

10· विवेच्य नाटकों में दमन, शमन, उदात्तीकरण, स्थानान्तरण, प्रक्षेपण या आरोपण, क्षतिपूर्ति आदि रक्षायुक्तियों का सहारा लेनेवाली स्त्री-पुरुष पात्र दिखायी पड़ते हैं।

यहाँ भी नाटककार का दृष्टिकोण केवल पात्रों की मनोविकृतियाँ दर्शाना नहीं बल्कि रक्षायुक्तियों के माध्यम से उनकी विशिष्टता और मानविकता दिखाना ही रहा है।

संदर्भ

1· असामान्य मनोविज्ञान के मूल आधार - डॉ·लाभसिंह, डॉ·गोविंद तिवारी, पृ·12, च·संस्क·1982 ई·

2· असामान्य मनोविज्ञान - डॉ·लाभसिंह तिवारी, डॉ·गोविंद तिवारी, पृ·15-16, च·संस्क·1982 ई·

3· सामान्य मनोविज्ञान - एस·एस·माथुर, पृ·68, द्वादश संस्क·1982 ई·

4· सामान्य मनोविज्ञान - एस·एस·माथुर, पृ·77, दादश संस्क·1982

5· असामान्य मनोविज्ञान के मूल आधार - डॉ·लाभसिंह, डॉ·गोविंद तिवारी, पृ·258-259, दादश संस्क·1982 ई·

6· वही, पृ·277

7· डॉक्टर - विष्णु प्रभाकर, पृ·25, संस्क·अनुल्लेख्य

8· वही, पृ·75

9· वही, पृ·64

10· वही, पृ· 50

11· वही, पृ·72

12· असामान्य मनोविज्ञान और आधुनिक जीवन - डॉ·शरयू प्रसार चौबे, पृ·503, संस्क·1988-89

13· बन्दिनी - विष्णु प्रभाकर, पृ·20, संस्क·1991 ई·

14· वही, पृ·33

15· वही, पृ·34

16· वही, पृ·67

17· वही, पृ·66

18· वही, पृ·55

19· वही, पृ·64

20· वही, पृ·58

21· वही, पृ·75

22· वही, पृ·78

23· असामान्य मनोविज्ञान और आधुनिक जीवन - डॉ·शरयू प्रसाद चौबे, पृ·589-90, संस्क·1988-89

24· टगर - विष्णु प्रभाकर, पृ·11, संस्क·1986 ई·

25· वही, पृ·56

26· वही, पृ·11

27· वही, पृ·23

28· असामान्य मनोविज्ञान - डॉ·लाभसिंह, डॉ·गोविंद तिवारी, पृ·18, च·संस्क·1982

29· डॉक्टर - विष्णु प्रभाकर, पृ·102, संस्क·अनुल्लेख्य

30· वही, पृ·28

31· बन्दिनी - विष्णु प्रभाकर, पृ·27, संस्क·1991 ई·

32· वही, पृ·45

33· डॉक्टर - विष्णु प्रभाकर, पृ·64, संस्क·अनुल्लेख्य

34· वही, पृ·66

35· वही, पृ·68

36· The Phycho-dynamics of Abnormal Behaviour -J.F.Brown P. 174, Ed. 1940,
'Transference is a sort of mental process by which the feeling tone of love is shifted or transferred from one object or person to another'.

37· टगर - विष्णु प्रभाकर, पृ·83, संस्क·1986 ई·

38· वही, पृ·47

39· वही, पृ·10

40· वही, पृ·20

41· वही, पृ·26

42· वही, पृ·23

43· वही, पृ·32

44· वही, पृ·33